REVIEW OF RESEARCH
ISSN: 2249-894X
IMPACT FACTOR : 5.7631(UIF)
UGC APPROVED JOURNAL NO. 48514
VOLUME - 8 | ISSUE - 9 | JUNE - 2019

धर्म का उजास एवं उसका प्रछन्न अध्यात्म- मूल्यपरक विश्लेषण

मंजू अरोरा
अनुसंधित्सु- कला एवं भाषा विभाग, लवली प्रोफेशनल यूनिवर्सिटी, फगवाड़ा, पंजाब. प्रधानाचार्य: सीनियर सेकेंडरी स्कूल, जालंधर.

सारांश (Abstract):

मानव जीवन की विकास गाथा में उसकी सभ्यता और संस्कृति–ये दोनों चरण उसे एक वास्तविक मानव की संज्ञा देते हैं | और यह हुआ उस भय के कारण जो सांस्कृतिक होने की राह में, धर्म और नैतिकता के रूप में उसके समक्ष उपस्थित हुए | प्रकृति के उतार-चड़ाव ने मनुष्य को कभी अचंभित किया,कभी डराया | भय, आश्चर्य और आस्था अथवा विश्वास को धर्म का नाम दिया | इस लिए मनुष्य ने एक अनदेखी सत्ता के प्रति अपनी श्रद्धा को विकसित किया और उस शक्ति को परमात्मा अथवा धर्म की संज्ञा दी | परम शक्ति के भिन्न-भिन्न रूपों की कल्पना, उसके अवतारों में आस्था से बढ़ी, और उन की कथाओं में मनुष्य ने ईश्वर के रूप को अनुभव किया। किन्तु यह विषय महती गंभीर हैं | भारतीय मानस के अंतर्मन तक गुंथे हुए सिद्धांत धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष अपनी जड़ों की ओर मानवीय मानसिकता को प्रेरित करते हैं | संभावनाएँ बहुत होने पर भी, बहुत कम लोग इस सत्य को जान पातें है कि सांस्कृतिक धरातल पर इन सत्यों का आधार क्या है ? और क्यों इसे जानना स्वयं की जड़ों से जुड़ना है ? कई महत्वपूर्ण प्रश्न इस उद्वेलन को आश्रय देते हैं –जैसे धर्म जीवन में क्या स्थान रखता है ? नैतिक होने के लिए धार्मिक होना क्यों आवशयक है ? अध्यात्म जीवन के किस पहलु का आधार है ? क्या अध्यात्मिक होना धर्म से किसी प्रकार जुड़ा होना है ? नैतिक व्यवहार करने वाले की प्रासंगिकता वर्तमान में कितनी है? विज्ञान को मानने वाले क्या धार्मिक आचरण नहीं करते? अध्यात्म की चर्चा एक फैशन सा क्यूँ हो गया है ? धर्म के नाम पर होने वाले कर्मकांड और अन्धविश्वास धर्म और अध्यात्म पर क्या प्रभाव डालते हैं ? धर्म के नाम पर दिशा भ्रम क्यों हो जाता है ? क्या मानव धर्म को जानता है? अथवा सिर्फ कथित धार्मिक-परम्पराओं को मानते जाने में ही अपने कर्तव्य की इतिश्री समझता है ? धर्म-नैतिकता और आध्यात्मिकता, मानवीय मूल्यों को पुनर्जीवित करने में सक्षम है क्या ?

प्रश्नों की समाप्ति कहीं नहीं होती, हाँ उचित उत्तर, मन के झंझावातों और असत्य को तिरोहित कर के आस्था की पुनर्स्थापना अवश्य कर पाते हैं | तो उत्तरों की दिशा में प्रयास करते है |

बीज शब्द : (Key Words) : सर्वश्रेष्ठ, निर्द्वन्द्व, आत्मसमर्पण,साधना, संकल्प, प्रछन्न, आध्यात्मिकता, पुनर्जीवित, संवेदनशील,चेतना, अंत:प्रज्ञा, संवेदनात्मक , अस्तित्व, अन्वेषण, तार्किक, अध्यात्म, बौद्धिकता.

भूमिका: (Introduction):

धर्म इतना संवेदनशील विषय है, कि जितने मस्तिष्क है, उतने विचार है | कोई इसे संकुचित रूप में लेता है, तो कोई व्यापक अर्थों में देखता है |.हिंदी की महती साहित्यिक पत्रिका, 'आहा जिन्दगी!' के संपादक आलोक श्रीवास्तव पत्रिका के मार्च 2017 अंक में लिखते हैं, **"सन 1931की बात है | लाहौर के बोर्स्टल जेल में भगत सिंह फांसी का इंतजार कर रहे थे| उसी जेल में एक वृद्ध सिख स्वतंत्रता सेनानी भी थे उन्होंने भगत सिंह से यह कहकर मिलने से मना कर दिया था कि उन्होंने अपने केश**

कटवा कर सिख धर्म की तौहीन की है | भगत सिंह ने उन्हें जवाब भेजा कि केश क्या, देश पर मैं अपने अंग-अंग कटवा कर कुर्बान कर सकता हूँ | यह जवाब बूढ़े गदरी बाबा को रुला देने वाला था | उम्र के आखिरी पड़ाव पर एक युवक ने उन्हें धर्म का मर्म समझा दिया था | भगत सिंह और वे वृद्ध, धर्म के दो छोरों पर खड़े थे | एक छोर विश्वास का था, तो दूसरा अंतःप्रज्ञा और तर्क का–साथ ही व्यापक मानवीय मूल्यों का भी |" [1] धर्म की इससे सटीक मार्मिक व्याख्या क्या हो सकती है ? प्रत्येक का है एक अलग दृष्टिकोण | धर्म कुछ लोगों के लिए एक विधि सी है, जिसके अनुसार वह अपने कर्मों को निश्चित करते हैं | उन्हें कर्मकांड भी कह सकते हैं | धर्म ने कई तरह से मनुष्य के मन को प्रभावित किया है | कोई धर्म गुरुओं के बताए रास्तों को ही धर्म मान बैठा है | और कोई ध्यान लगा कर, मौन बैठ कर, सर्वव्यापक को आवाज़ देने का प्रयास कर रहा है | वैसे.. "धर्म जिस भी रूप में हो,वह है! और रहेगा !-तब तक-जब तक जीवन को उसकी जरुरत रहेगी, मनुष्य के अंतर्मन में उसकी मांग रहेगी | धर्म मुख्य रूप से दो स्तरों पर मानव अस्तित्व से सम्बंधित है ---

1. **लौकिक जीवन और उसकी जरूरतों के स्तर पर**
2. आध्यात्मिक जीवन और उसकी आकांक्षाओं के स्तर पर..

अभी मानवता के बहुत बड़े हिस्से के लिए इन दोनों जरूरतों के स्तर पर ऐसा कुछ इतने बड़े पैमाने पर नहीं हो सका है कि वह **धर्म का विकल्प बन सके |"**[2]

समाज चेतना और मूल्यों के अधिक गहरे लक्ष्यों की ओर अपने कदम बड़ा रहा है | धर्म यदि आश्चर्य और आस्था है तो विज्ञान उसी आस्था का सत्य-साबित होने पर विज्ञान बन जाना है | धर्म में नैतिक आचरण और आध्यात्मिक आचरण की जो जिज्ञासा होती है–उसमें एक तरह का व्यवहार और कर्मकांडों का प्रवेश हो जाता है | कैसे पूजा करें ? कब क्या खायें ? कब सोयें ? क्या पहने ? किस विधि से काम करें ?

वातावरण और काल और परिस्थितियों के चलते धर्म और नैतिकता की मान्यताएं भी मानव के व्यवहार को प्रभावित करती हैं | यहाँ यह जानना प्रासंगिक है कि आचरण की क्रिया-प्रतिक्रिया में मानव सामाजिक मान्यता की भी आकांक्षा करता है I और जब मानव, समूह तथा व्यक्तिक विचारों-मूल्यों की ओर बढ़ता है तो धर्म की मीमांसा बेहद सूक्ष्म होकर अध्यात्म के आयामों को स्पर्श करने लगती है I इसीलिए धर्म के आगे सामूहिक आग्रहों की अवमानना कर कभी मानव व्यक्तिक ज्ञान का आश्रय लेता है I और एकांकी होने पर भी धर्म के अनंत मार्ग का आग्रही व्यक्ति अति महत्वपूर्ण निर्णय कर बैठता है | जिसे संततियां सदियों तक याद् करती है | उदाहरण है -धृतराष्ट्र पुत्र युयुत्सु का ! -युद्ध पूर्व अपनी माता को अद्भुत और गहरी सी प्रतिक्रिया करता युयुत्सु कहता है कि दुर्योधन उसका बड़ा भाई नहीं वरन वह स्वयं उसका छोटा भाई है | दोनों बातों का शाब्दिक अंतर न होते हुए भी उसके अर्थ कितने विपरीत हो जाते हैं | युयुत्सु भाई का समर्थन तो करना चाहता है, लेकिन अधर्म और पाप का नहीं | माँ के विरुद्ध जाकर भी वह कहता है, **"यही संकट है मेरा! कोई मेरा विश्वास नहीं करेगा, किन्तु मैं अपने स्वार्थ के लिए नहीं, न्याय के लिए जीना चाहता हूँ | सुविधापूर्ण चाहे न हो, किन्तु मैं स्वच्छ जीवन जीना चाहता हूँ |"** माता के द्वारा विभीषण का उदाहरण देने पर युयुत्सु का कथन है कि वह विभीषण को कतई दोषी नहीं मानता | उसने धर्म का मार्ग चुना था | ..युयुत्सु के अनुसार विभीषण ने अपने धर्म का पालन किया | वह कहता है, **"व्यक्ति को सत्य के लिए जीना चाहिए माँ! सम्बन्धियों के लिए नहीं |"**[3] जीवन में धर्म के अनुसार भाई का साथ नहीं, धर्म के पीछे प्रकट अध्यात्म का निर्णय कर पाने में समर्थ होना सफल मानता हैं I विभीषण की त्रासदी भी यही है-राम–रावण युद्ध के विषय में वह कहता है-**'अपने राष्ट्र के प्रतिक्या यही कर्तव्य है मेराइस आक्रमण में साथ दूँ ?"..."राम ! मेरी आत्मा में भी यही है द्वन्द ..." वह राम से प्रश्न करता है कि इस युद्ध के पश्चात् मुझे द्रोही कहकर लांछित किया जायेगा!**[4] एक विभक्त मनोस्थिति में व्यक्ति जब अपने धर्म के लिए-समूह अथवा जड़ो से लड़ाई करता है तो अपने मूल्यों पर श्रद्धा होने के बावजूद अंतर्मन की लड़ाई अध्यात्म के स्वरों के अनुरूप लड़ता है | अपने धर्म की सुनता है| अपने समाज से कटता है| एकांकी निर्णय उसको इतिहास बनाने की प्रेरणा तो देते हैं किन्तु वह स्वयं को अपने समाज के विश्वासपात्र के पद से अपदस्थ भी महसूस करता है | व्यक्ति का ऐसे घटना क्रम में खंडित होता व्यक्तित्व नियतिबद्ध मूल्यों के प्रति आग्रह भी है और विद्रोह के स्वरों को आगाज देता ज्वलंत प्रश्न भी है | यही अपदस्था व्यक्ति के धर्म एवं उसके प्रछन्न अध्यात्म में समन्वय का कार्य करती है I आज का मनुष्य भी युयुत्सु और विभीषण की तरह अपने आप में एक और अप्रमाणित व्यतित्व साथ साथ ढो रहा है | क्या हम जान पाते हैं कि इन परिस्थितियों में धर्म एवं कर्तव्य से दिग्भ्रमित होने से क्या अनर्थ अथवा अर्थ हो सकता है ?[5] यही अंतर है, स्वीकृत परिपाटी पूर्ण धर्म के मार्ग का और उसके प्रकाश में नहाये नवजागरण से अनुभूत अध्यात्म का I सत्य दोनों का एक ही है किन्तु अर्थ दोनों का नर-स्वार्थ और नारायण-

परमार्थ के अनुरूप परिवर्तित हो जाता है। इसे ही समझना और पाना, वास्तविक अर्थों में मोक्ष के द्वार की ओर की अनंत यात्रा का आरंभ है।

विश्लेषण : (Explanation):

एक बड़ी सारगर्भित सी **'बोध कथा'** है, 'सूफी संत फरीद ने एक रात सपना देखा | सारा स्वर्ग सजा-धजा था-रास्ते पर फूल, चारों और नृत्य और संगीत | उसने पूछा, 'भाई, क्या बात है ? कोई उत्सव है क्या? जवाब मिला, 'आज परमात्मा का जन्मदिन है | हम खुशियाँ मना रहे हैं |' लिहाजा फरीद एक पेड़ के नीचे जा खड़ा हुआ | सड़क पर एक लम्बा जुलुस गुजरने लगा | जुलुस के आगे एक घोड़े पर बैठा एक आदमी चल रहा था | फरीद ने सवाल किया, 'भाई ये महाशय कौन हैं ?' जवाब आया, 'इन्हें नहीं जानते ? ये ही तो हजरत मोहम्मद हैं |' पीछे लोगों का हुजूम उमड़ रहा था | फरीद ने पूछा, 'फिर ये लोग कौन हैं ?' जवाब मिला, 'ये लोग मोहम्मद के अनुयायी हैं | इन्हें मुसलमान कहते हैं |' पीछे पीछे क्रास हाथों में लिए लाखों ईसाईयों के साथ ईसामसीह आये | इसके बाद अपने स्वर्ण रथ पर बैठे कृष्ण आये, धनुर्धारी राम आये| पीछे नाचते गाते भक्तों का मेला लगा हुआ था...इसी तरह पैगम्बर आते रहे, जय-जयकार करते जुलुस गुजरते रहे | और सभी जुलूसों के गुजर जाने के बाद अंत में गधे पर सवार एक बूढ़ा आदमी आता हुआ दिखाई दिया | उसके साथ कोई नहीं था | वह अकेला चला जा रहा था उसे देखकर फरीद को हंसी आ गयी| न कोई अनुगामी, न कोई साथी | गधे पर बैठा अकेला कहाँ जा रहा है | फरीद ने पूछा, 'श्रीमान ! आप हैं कौन ? मोहम्मद, ईसा, राम,बुद्ध, सभी को मैं पहचानता हूँ | बिना किसी अनुगामी के इस तरह तो एक तमाशा लग रहे हैं आप |' उस बूड़े ने उदास सी मुस्कान के साथ कहा, **'प्रिय मित्र, मैं ही परमात्मा हूँ | आज मेरा जन्मदिन है | लेकिन कुछ लोग ईसाई बन गये, कुछ मुसलमान, कुछ यहूदी, कुछ हिन्दू.. मेरे साथ चलने के लिए कोई नहीं बचा |'** चौंककर फरीद जाग उठा | अगले दिन उसने अपने शिष्यों को बुलाया और कहा, आज से मैं मुसलमान नहीं रहा | कल का सपना मेरे लिए एक इल्हाम था | अब मैं किसी संगठित धर्म का अनुयायी नहीं हूँ | मैं खुद अपने रास्ते पर चलूँगा | **मैं परमात्मा का अनुगमन करना चाहता हूँ | कम से कम एक बंदा तो उसके साथ हो |' ....अगर आपने परमात्मा को लेकर पहले से ही कोई धारणा बना ली है, तो आप उसे नहीं जान सकते | आपकी धारणा ही आपके और ईश्वर के बीच सबसे बड़ी दीवार बन जाएगी | सभी बाह्य धारणाओं को छोड़ देने पर ही अंतर्यात्रा आरम्भ हो सकती है।'**[6]

उपरोक्त कथा क्या कहती है ? नहीं ! किसी धर्म अथवा धर्म गुरु के विरोध का स्वर नहीं है यह ! विपरीत इसके स्व-खोज और वास्तविक धर्म की ओर ईशारा करती परम शक्ति की अवधारणा,उसकी प्रेरणा है | एक बोध है, कि हम किस राह पर हैं ? स्व-निर्मित ईश्वर के आभास और उसके अवतारों की? अथवा स्वयं परमात्मा की | "धर्मगुरु, अगर सच्चा हो तो भी आपके और सत्य के बीच केवल एक सेतु हो सकता है | यात्रा तो आपको ही करनी होगी | **किसी बुद्ध, किसी जीसस, किसी मोहम्मद का सत्य आपका अपना सत्य नहीं हो सकता | अगर यह संभव होता तो बुद्ध और महावीर भी वेद और पुराण पढ़कर सत्य को जान लेते और उन्हें सत्य की खोज में बरसों न भटकना पड़ता |"**[7]

स्पष्ट ही है कि धर्म की व्यापक मान्यताएं जो भी हों, उसकी अनुभूति प्रत्येक की अपनी व्यक्तिगत होती है | उसे स्वयं के सिवा कोई और अनुभूत नहीं कर सकता | **'मान लेना और जान लेना' का बहुत सूक्ष्म अंतर है यह| जिसे समझ आ गया वह बुद्ध हो गया |** 'अपने आप को जानिए' ऐसा सालों से कहा जा रहा है, किन्तु क्या जानने को है ? नाम,पद, वंश, शरीर की पहचान के अतिरिक्त और अलग क्या है ? जिसे जाना जाये | शायद वही तो हम हैं ! स्वयं को जानना और स्वयं की ही दृष्टि, यही अध्यात्म का आधार है | कितनी विडम्बना है ! महाभारत में देववृत भीष्म ने धर्म समझ के जिस प्रतिज्ञा को किया और अपने अधिकारों से वंचित हुआ और महाराज शांतनु की कामना पूर्ण हुई, किन्तु धर्म की दृष्टि से ही विचारें, दोनों में सुखी कौन है–भीष्म या शांतनु ? निश्चित रूप से निष्काम भीष्म, पूर्णकाम शांतनु से अधिक सुखी है | धर्मानुसार, कामना सुख का नहीं, छलना और यातना का दूसरा नाम है |..कामनाओं के प्रपंच को शांतनु से अधिक अब और कौन समझ सकता है? कामना पूर्ण होने पर भी कोई कभी पूर्णकाम हुआ है क्या? क्या माँगा था उन्होंने और क्या पाया ..|"[8]

कैसी त्रासदी है, व्यक्ति जानता है, समझता है, मानता है परन्तु करते समय स्वयं को असहाय बना कर आसक्ति के हाथों मूर्ख और दुर्बल साबित हो जाता है | धर्म की राह, नीति और नैतिक आचरण की दिशा की तरफ ही संकेत करती है | जीवन के धर्म-अर्थ-काम और मोक्ष के लक्ष्यों को पाने हेतु अपने आचरण की पवित्रता और शास्त्रगत कर्म ही अंतत: मुक्ति का मार्ग प्रशस्त करते हैं | यही तो है अध्यात्मिक होना | धर्मानुसार कर्म करते हुए अर्थ उपार्जन करना, गृहस्थ का कार्य करते हुए काम-कामना को पूर्ण करना और मोक्ष की ओर कदम बढ़ाते जाना |

मानव को रचते हुए पारब्रह्म ने भिन्न-भिन्न सांचों का प्रयोग किया होगा, तभी न प्रत्येक रचना भिन्न है | तो बाह्य आवरण के भिन्न रहते आन्तरिक संसार भी तो भिन्न ही होगा। उसी प्रकार धर्म की मीमांसा अलग घटकों के लिए अलग

आध्यात्मिक आयामों का प्रतिपादन करती है। अध्यात्म जीवन को उद्दात भावों से भर कर न्याय और नैतिकता की ओर प्रेरित करता है | झूठ और पाखंड से मुक्त करके सत्य के मार्ग की ओर बढ़ने की प्रेरणा देता है | जैसा महाभारत में महात्मा विदुर के आचरण में उपलब्ध होता है | सम्पूर्ण महाभारत में महात्मा विदुर ही ऐसे पात्र हैं जो निर्दोष एवं निष्कलंक हैं | जिन्हें स्वार्थ छू नहीं गया | जिनको तृष्णा और आवश्यकता का भेद विज्ञ है | जो किसी लालसा के अधीन नहीं | जो न्याय के पक्ष में आवाज़ उठाने का जोखिम उठाते हैं | **जिनमें सक्षम नहीं सत्य के अनुयायी का साथ देने का साहस है|** जो धर्म के साथ रहते हुए चातुर्य में भी माहिर हैं | **जो प्रेम का महत्त्व भी समझते हैं, और संबंधों की मर्यादा को भी आहत नहीं होने देते|** जो धृतराष्ट्र को बड़े भाई का मान देते हैं | न्याय के लिए उसे कठोर सलाह देने का साहस भी कर पाते हैं | **नैतिक और अध्यात्मिक व्यक्ति सत्य के बल से निडर हो जाता है|** वह सोच पाता है कि सही और गलत व्यवहार राज-समाज को किस प्रकार हानि पहुंचा सकते हैं | वह इसका विरोध जताता है | वह समझता है कि **किसी के दोषपूर्ण अनैतिक आचरण को प्रश्रय देना उसको मौन सहमति देना ही है|**[9]

जीव जगत की रचना की परमपिता ने, और एक जीव का निर्माण किया मानव के रूप में | वह औरों से अलग है ! कैसे ? आहार, निद्रा, भय, मैथुन आदि सामान्य क्रियाएं सब जीवों में पायी जाती है | पशु से पृथक मनुष्य की श्रेष्ठता कैसे है ? उसके धर्म के कारण | अपने विवेक एवं आचरण की पृथकता के कारण ! यह वह भेद है, जिससे मनुष्य को एक अभिनव व्यक्तित्व मिलता है | जिसे स्वार्थ और परमार्थ का भेद समझ आता है | जो मानव-मानव के आचरण को मन के रास्ते समझ सकता है | जो समूह और समुदाय का महत्त्व समझता है, जिसे अपने अधिकार एवं दूसरों के अधिकारों का भान है | जिसे अपने साथ परमार्थ की शिक्षा उसके शास्त्र देते हैं | जो साहित्य के, संस्कारों के रचयिता ऋषि मुनियों के ज्ञान का संवाहक है | जो पीढ़ियों से अपनी सांस्कृतिक विरासत को आने वाली संतति को देने का निरंतर प्रयास करता है |

"मनुष्य उसी को कहना जो कि मननशील होकर स्वात्मवत अन्यों के सुख-दुःख और हानि-लाभ को समझे | जो अन्यायकारी बलवान से भी न डरे और धर्मात्मा निर्बल से भी डरता रहे|" मनुष्य का यह परिचय दिया था **महर्षि दयानंद ने एक शताब्दी पूर्व |'**[10]

यही है सटीक परिभाषा मनुष्य के मनुष्य होने की | वास्तव में धर्म जीवन के जीने की कला ही तो है ! धर्म मानव को ईश्वर के समकक्ष बनाता है, **"अहं ब्रह्मस्मि"–मैं ही ब्रह्म हूँ–** की भावना मनुष्य को परम सत्ता के सद्गुणों को अपने आचरण में उतार कर उसके जैसा बनने को प्रेरित करती है | धर्म को धारण करके ही मनुष्य दैवी विभूतियों से परिपूर्ण बनता है और महामानव कहलाता है |

शास्त्रों, ऋषि-मुनियों, मनीषियों, विचारकों एवं प्रबुद्ध व्यक्तियों द्वारा, धर्म के अंतर्गत कुछ गुणों को रखा गया है | जिसके अनुसार आचरण करने से व्यक्ति समाज एवं विश्व का कल्याण होता है | मानव जीवन सम्मुन्नत होकर दैवी गुणों से युक्त होकर निखरता है | और वह अपनी सात्विक प्रवृतियों द्वारा सर्व साधारण का भला करता है | यह शास्त्र-सम्मत निम्न गुण इस प्रकार हैं –

"धृतिः क्षमा द्मोअस्तेय्म शौच्मीन्द्रिय्निग्रहः |
धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकम धर्म्लाक्ष्णम" | (सन्दर्भ :मनुस्मृति)

अस्तु-धर्म मनुष्य के लौकिक-पारलौकिक उन्नति में सहायक होता है | किन्तु तभी जब ये विश्व-चेतना के विकास में सहायक हो | तब धर्म का वास्तविक उद्देश्य –वसुधेव-कुटुम्बकम का भारतीय आदर्श पूरा होगा | **अथर्वेद** में इसे इस प्रकार से कहा गया है – **"सर्वा आशा मम मित्रम भवन्तु !" अर्थात सभी दिशाओं के लोग मेरे मित्र बनें |**[11] और यह केवल धर्म के आभास से नहीं होगा ! यह संम्पन्न होगा धर्म के प्रछन्न रूप अध्यात्म से। एक और बात ध्यान रखने योग्य है कि धार्मिक जीवन धर्म-मत से प्रथक है | धर्म- मत युग, राष्ट्र, व् समय के साथ चाहे परिवर्तित हो जाये परन्तु उसकी आत्मा नहीं बदलती | उपरोक्त दस लक्षणों के अतिरिक्त प्रेम करना, सत्य बोलना, दया करना आदि का जस-का-तस रहना धर्म की आत्मा है, मानव धर्म के अंतर्गत, ईश्वर को स्मरण करता है, उसकी पूजा अर्चना करता है, उसका ध्यान करता है –यह धर्म जीवन के भाग हैं | लेकिन पूजा करते हुए व्यक्ति किस ओर मुंह करके बैठता है, पछिचम् की ओर अथवा पूर्व की ओर | घुटने टेकता है या सर झुकाता है | ये वह भिन्न मत हैं, जिनके अनुसार वह अपने व्यवहार नियत करता है | यही बात अपनी अज्ञानता में लोग नहीं समझते, और धर्म के नाम पर बनाई हुए अंध-परम्पराओं के लिए झगड़ा करने लगते हैं | जो बातें और विश्वास आस्था के लिए निर्मित होती हैं वह मजहब के नाम की बाधाएं बनकर कट्टर-समुदायों में समाज को बाँट देती हैं | याद रहे कि धर्म मत और धर्म जीवन का सूक्ष्म अंतर स्पष्ट करता है, कि **प्रभु से मानव का सीधा सम्बन्ध है | बीच में कोई और एजेंट नहीं है |** बस यही भेद समझने से वास्तविक धर्म का

अर्थ समझ आ जाता है | और **वह अध्यात्म बन जाता है** | जीवन की उद्दात्तता उसके सत्य-शिव-सुन्दर में छिपी है | जिसे भारतीय अध्यात्म की संज्ञा देते हैं | कहते हैं गुणों-का और धर्म का चयन करना तो बहुत सरल है | किन्तु उसकी पालना करना कठिन है | अन्यथा कोरे सिद्धांत व्यर्थ हैं | धर्म के पालन से समाज और व्यक्ति के जीवन और व्यवहार में श्रेष्ठता और उत्तमता का दर्शन होना चाहिए तभी सर्व-साधारण का कल्याण संभव है | **मनुस्मृति** में कहा गया है –

"धर्म हतो हन्ति धर्मो रक्षति रक्षति: |
तस्माद् धर्मो न हन्तव्यो मा नो धर्मो ह्तोवधीत |"[12]

बात वही है यदि हम धर्म की उपेक्षा करते हैं तो धर्म हमें मार देता है | **महर्षि कणाद ने कहा है -"जिससे इस संसार में उन्नति हो और परलोक में कल्याण की प्राप्ति हो सके, वही धर्म है |"**[13]

भारतीय संस्कार एवं संस्कृति केवल धर्मानुसार किये कृत्यों का अनुमोदन करती है |

कृष्ण कहते हैं, **"जीवन का कोई सुख धर्म से बड़ा नहीं; धर्म की अवहेलना,किसी भी बड़े-से-बड़े कष्ट से बड़ा कष्ट है | धर्म,वासना से बड़ा है, शक्तिशाली है, समर्थ है..धर्म ही धारण करता है –सृष्टि को, मनुष्य को, मनुष्य के शरीर को..वासना किसी को धारण नहीं करती, वह तो क्षय मात्र करती है...जीवन धर्मानुकुल होना चाहिए, भोग भी धर्मानुकुल होना चाहिए, त्यागपूर्ण |"**[14]

धर्म और संस्कृति के प्राणदाता कृष्ण ही यह कह रहें हैं- तो तथ्य का सत्य यही है | जीवन के मूल्य धर्म निर्धारित ही हों, तभी अभीष्ट हैं | समस्त शास्त्र इसी जीवन सिद्धांत का अनुमोदन करते है | धर्म की डोरी बहुत सूक्ष्म है | दुरूह स्थितियां ही उसकी कठोर परीक्षा की अग्नि है, जिसमें से तैर कर वह प्रदीप्त हो उठता है | मनुष्य अपने देश-काल-समय-और संतति के अनुरूप कुछ मूल्य और सिद्धांत धर्म के नाम पर भय पूर्वक अथवा विश्वास के कारण रचता रहा है | वही उसकी नैतिकता को पथ दिखाते है, और इहलोक से पारलौकिक जगत का ज्ञान लेने को बाध्य करते है | जिन्हें हम अध्यात्म, नैतिकता और धर्म का नाम देते हैं | धर्म अध्यात्म की दिशा की ओर प्रेरित करता है | व्यक्ति एक आस्था के रहते अपने कर्मो के सूत्र को समझने का प्रयास करता है | उस अनदेखी शक्ति से भयभीत होकर अपने कार्यो पर अंकुश रखता है | उसे ही वह धर्म की संज्ञा देकर अपने आचरण की दिशा निर्धारित करता है | कई बार इसके लिए वह धर्म गुरुओं का अनुसरण भी करता है | लेकिन 20 सवी सदी के गंभीर विचारक **जे.कृष्णमूर्ति ने कहा था, "The moment you follow someone, you cease to follow truth."** धर्म हो,धर्मग्रन्थ हों,या कोई धर्मगुरु वह केवल एक इशारा भर है | संस्कृत कहावत के अनुसार गुरु की अंगुली जो शिष्य को संकेत देती है, 'गंधार इस दिशा में है |' अब अगर शिष्य अंगुली पकड़ कर बैठ जाये तो अपनी मंजिल पर कैसे पहुंचेगा | धर्म गुरु अगर सच्चा हो तो भी आपके और सत्य के बीच केवल सेतु हो सकता है | **अपनी यात्रा तो आपको ही करनी होगी | अन्यथा सभी धर्म गुरु वेदपुराण पढ़ कर बुद्ध बन जाते, उसके लिए बोद्धि वृक्ष के नीचे तप की जरुरत नहीं थी |'**[15]

'20 वी सदी के उत्तरार्ध में विश्व के कई हिस्सों में अध्यात्मिक खोजियों ने इस विषय पर एक नये सिरे से चिंतन-मनन आरम्भ किया | इस दौरान एक नये आन्दोलन का जन्म हुआ जिसमें धर्म के संकीर्ण और कठोर दायरे के बाहर आध्यात्मिकता की खोज प्रारंभ हुई | इस तरह एक ऐसी आध्यात्मिक विचार प्रणाली का जन्म हुआ जिसका किसी धर्म से कोई लेना देना नहीं था |..इस प्रणाली ने न केवल एक नई अध्यात्मिकता प्रस्तुत की, बल्कि पर्यावरण, विश्व शांति,शिक्षा, गरीबी, सामाजिक भेदभाव, व्यक्तिक विकास और मानवीय संबंधों जैसे धर्मबाह्य विषयों को भी सम्मिलित किया | इस आन्दोलन के एक प्रमुख चिन्तक, **एकहार्ट तोले का कहना है कि नाभ्कीय हथियारों के चलते मानवता इतिहास के उस मुकाम पर आ पहुंची है, जहाँ उसके सामने केवल दो ही विकल्प बचे हैं-अपनी चेतना का विकास या सर्वनाश |'**[16]

ईश्वर ने सबसे उत्तम प्राणी, मनुष्य बना कर भी, उसमें से स्वार्थ को तिरोहित करने की क्षमता, उसने स्वयं प्राणी को देकर उसे आत्मिक परीक्षा में डाल दिया | अब जो खरा उतर सकेगा, वह ही तर सकेगा |

धर्म के पीछे छिपी प्रछन्न आध्यात्मिकता वास्तव में है क्या ? क्या हैं मान्यताएं ? जो हजारों वर्षों से मानी जाती रहीं हैं ! धरती पर अपना वर्चस्व बनाये रखने वाले धर्मों का विरोध किये बिना ही कितने प्रश्न उठाती रहतीं हैं | कभी रोष उत्पन्न करती हैं, कभी विकल्प भी प्रस्तुत करती हैं | साहित्य के नव-युग के विचारकों का मत है कि वास्तव में आध्यात्मिकता विश्वास का नहीं अनुभव का विषय है | क्यूंकि **विश्वास तो सामूहिक ही हो सकता है, किन्तु अनुभव केवल व्यक्तिगत ही हो सकता है** और उसमे कोई साझेदारी नहीं हो सकती, बस यही है आध्यात्मिकता ! "ईश्वर, स्त्रोत, अस्तित्व, महाप्रज्ञ, नियंता या जो भी कहना चाहें, वह एक ही है | अर्थात चराचर जगत का, चेतन-अचेतन का स्वामी वह एक ही है | किसी एक जाति,

व्यक्ति विशेष या धर्म विशेष, किसी को नहीं कहा जा सकता कि अन्यों के मुकाबले ईश्वर उसके अधिक निकट है | **अगर हम उस ईश्वर के ही हिस्से हैं तो और को देखे बिना, औरों के मुकाबले के बिना, हरदम उसके निकट हैं | उसे पाने के लिए किसी विधि विधान, कर्म-कांड या किसी मध्यस्त की आवश्यकता नहीं है |"**[17]

और है ही क्या धर्म और आध्यात्मिकता ? हाँ यह जरुर है कि जहाँ धर्म और आध्यात्मिकता की विवेचना हो रही हो, वहां उसके क्रियान्वयन की यथार्थता को अवश्य देखना होगा | धर्म खोखली अंध-भक्ति है ? या अध्यात्म कोरा-ज्ञान ? जब तक मानव उसे अपने क्रिया क्षेत्र में अपना नहीं लेता तब तक यह खोखला विचार अभिसार ही रहेगा | हाँ–जब मानव की नैतिकता उसे झिझोडती है और उसके ज्ञान को कर्म में परिणत करने को प्रोत्साहित करती है, तब वह नैतिक होकर अपने अध्यात्म और धर्म को विचार के धरातल से, कर्म के धरातल पर उतार लाता है | इसीलिए यह तीनों ही क्षेत्र परस्पर आपस में गुंथें हुए हैं | इन्हें प्रथक करके नहीं देखा जा सकता |

भारतीय मनीषी अपने शास्त्रों के अनुसार आचरण पर अधिक बल देते हैं | जीवन के इहलौकिक और पारलौकिक दोनों लोकों का सामान रूप से दायित्व-निर्वाह हो सके, तभी जीवन की सफलता मानी जाती है | **संत कबीरदास** के शब्दों में,
'माया महाठगिनी हम जानी ||तिरगुन फ़ांस लिए कर डोले बोले मधुरे बानी||

भगतन की भगतिन वे बैठी ब्रह्मा के ब्राह्मणी ||....कहे कबीर सुनो भाई साधो यह सब अकथ कहानी ||"[18] कबीर का यह रहस्यवाद भारतीय संस्कृति के अध्यात्मवाद का दर्पण है | महासमर में महामुनि व्यास इस विषय में आगाह करते हुए कहते हैं, **"प्रकृति के नियम बड़े विचित्र हैं पुत्र ! वह भ्रम को प्रोत्साहित करती है, माया का प्रपंच रचती है | मनुष्य सोचता है कि वह अपने लिए सुख संचित कर रहा है, जबकि वह अपने लिए अनंत यातना का सर्जन कर रहा होता है |"**[19] श्री कृष्ण की मद्भागवत गीता भी तो इसी सत्य का प्रतिरूप है | कैसा है यह धर्म का मर्म ! जहाँ धर्म है वहां जय है ! जहाँ कृष्ण हैं जय वहां है | और किस तथ्य का सत्य बच जाता ही है ? धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष में, अंतिम लक्ष्य मोक्ष को ही तो पाना है | फिर अर्जुन ने यदि कृष्ण को माँगा तो अध्यात्म की दृष्टि से मोक्ष को ही तो पाया| अर्जुन ने न केवल युद्ध में कृष्ण को अपने सारथ्य का कर्तव्य करने दिया वरन जीवन का सारथ्य भी कृष्ण को ही माना | आश्चर्य है ! धर्म इसका ही अनुमोदन करता है, और स्वयं मानव इसे जानते बूझते विपरीत आचरण करते चले जाते हैं | अध्यात्म यही जानने की क्षमता देता है | स्वयं कृष्ण भी तो इसी चुनाव की परीक्षा ले रहे हैं | नारायण(कृष्ण) बन कर नर(अर्जुन) की!

सृष्टि का विराट रूप यही तो है | उस की असीम अनुभूति | यही तो अध्यात्म की पराकाष्ठा है, जिसे समझाने की कोशिश कर रहे हैं श्री कृष्ण | संवेदनात्मक तरीके से समझाते हुए कृष्ण स्वभाव के साधुवाद का उदाहरण प्रस्तुत करते हैं | मनुष्य चाहे तो साधू बनकर ईश्वर को अनुभव कर सकता है | यही वास्तविक धर्म है | और अध्यात्म की ओर ले जाने वाला साधू-आचरण | अध्यात्म भी यही कहता है कि वास्तविक धर्म शांति में है जिसमें विश्व बंधुत्व का भाव हो | त्रिगुणात्मक प्रकृति में, तामसी और राजसी गुणों पर विजय पाने वाला व्यक्ति ही सात्विक राह पर अग्रसर होता है | किन्तु यदि उस राह पर तामसी शक्तियां अन्याय करने को तत्पर हों तो धर्म का अर्थ त्याग नहीं ग्रहण हो जाता है| यह सत्य है, कि शांति युद्ध से श्रेष्ठ है किन्तु यदि शांति प्रियता की आड़ में अन्याय को बल मिले तो युद्ध की अनिवार्यता को नकारना नहीं चाहिए | अत: तामसी त्याग से सात्विक ग्रहण सदैव श्रेष्ठतर है | इस बात के मर्म को जानने की आवश्यकता है |

जीवन के चार आयाम कहे जाते हैं, धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष | धर्मानुसार जीवन का आचरण, अर्थ उपार्जन की दिशा-धर्मानुसार, सीमित-मर्यादित काम पूर्ति एवं अंतत: मोक्ष की प्राप्ति | यदि मनुष्य की मेधा उसके नियंत्रण में हैं, वह धर्म के सात्विक तत्व को समझता है, तो बिना भटके अपने कर्तव्य को पहचान सकेगा | लोग साधना तो करते हैं किन्तु यह नहीं जानते कि साधना का लक्ष्य क्या है | प्रभु की लीला अद्भुत है... प्रभु धन देते हैं, तो एक व्यक्ति दान करता है और दूसरा व्यक्ति उसी धन को पा कर भोग में आकंठ लिप्त हो जाता है |..कितने ही उदाहरण है, इतिहास में कि एक व्यक्ति ने उग्र साधना की, स्वयं को तपाया, ईश्वर को प्रसन्न किया, किन्तु उससे उसकी भक्ति न मांग, अपने लिए कोई शक्ति मांग ली,.. और फिर उसी शक्ति के अहंकार में वह राक्षस हो गया |..तपस्या कर, साधना कर, भक्ति कर, अंत में व्यक्ति राक्षस हो जाये, इससे बड़ा दुर्भाग्य क्या हो सकता है | **हे प्रभु !..तू और कुछ दे, न दे, मनुष्य को सात्विक बुद्धि अवश्य दे, ताकि वह अपनी क्षमताओं का उचित उपयोग कर सके |"**[20]

उपसंहार: Conclusion:

अन्तत: सामान भाव की ही कितनी सरल, सहज और निष्कलंक **वेद प्रार्थना** है –

"सर्वे भवन्तु सुखं., सर्वे सन्तु निरामया:
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु, माँ कश्चित् दु:ख भागभवेत |"

उपरोक्त विवरण, धर्म एवं अध्यात्म के मर्म का निचोड़ कहता है | उस विराट को समझने के लिए मानवीय बुद्धि की क्षमता बहुत सीमित है | उस सृष्टिकर्ता-चैतन्य को समझने के लिए मनुष्य की चेतना अक्षम है | उसे जानने के लिए उसी की शरण में जाना होगा | तभी ये रहस्य स्पष्ट हो सकते है | अपने सीमित और संकुचित मस्तिष्क से उस विराट को जानना दुरूह है | अत : मनुष्य को अपना दिव्य वृतियों का आकाश ऊँचा करना होगा, फिर वह सात्विकता का मूल्याङ्कन कर सकने में सक्षम हो सकेगा,और वास्तविक रूप से परम सत्ता के रहस्य का मर्म पा सकेगा |

कृष्ण स्वयं इस प्रश्न का हल करते हुए कहते हैं, "मैं समझता हूँ कि ईश्वर की आवश्यकता केवल उन्हें ही है, जो उसके अभाव से सुखी नहीं हैं | यदि कोई व्यक्ति संसार में रहकर, संसार को पाकर, संसार में लिप्त होकर सुखी है तो उसे सचमुच ईश्वर की आवश्यकता नहीं है | ईश्वर की आवश्यकता तो उसी व्यक्ति को है, जो सारा संसार पाकर भी सुखी नहीं हैं |" वास्तव में वह आवश्यक है, हर क्षण उपलब्ध है किन्तु दिखाई नहीं देता | जैसे वायु की आवश्यकता हमें हर क्षण है और वह उपलब्ध भी है, लेकिन उसकी आवश्यकता का अनुभव नहीं होता, इसी प्रकार कुछ लोग ईश्वर की आवश्यकता को अनुभव नहीं कर पाते, वह स्वत: उपलब्ध होने के कारण आवश्यकता को अनुभव नहीं होने पाता | **"ईश्वर को जानना, उसका साक्षात्कार करना, उसके निकट जाना, उसके अनुरूप बनना और अंतत: वही हो जाना** | यह सब कुछ संभव है | अपने शरीर की (मोह की) मुट्ठियों को नहीं, मन की मुट्ठियों को खोल दें | कृष्ण कहते हैं कि, "आपको धन नहीं छोड़ना है, धन की आसक्ति छोडनी है | संसार नहीं छोड़ना है, संसार की आसक्ति को त्यागना है | **जिस क्षण आपके मन ने काम, क्रोध, लोभ , मोह को छोड़ दिया, उसी क्षण ईश्वर वहीँ प्रकट हो जायेंगे|.. हमारे कर्म से ही उसकी दया प्रेरित होती है | भक्ति, ज्ञान, कर्म सबमें योग हैसबमें आसक्ति रहित उद्धम है| अकर्म से ईश्वर कभी प्रसन्न नहीं होता |"**[21]

सन्दर्भ सूची : References:

1. /2. आलोक श्रीवास्तव,अहा जिंदगी पत्रिका,मार्च 2017 अंक, पृष्ठ 8

3. /4. विजय अहलुवालिया,अहा जिन्दगी, मार्च **2017**अंक, पृष्ठ **10**

5. नरेंद्र कोहली,महासमर,खंड-**1,**बंधन,पृष्ठ-**82**
6. नरेंद्र कोहली,महासमर,खंड-1, बंधन,पृष्ठ-286,287
7. प्रो. श्रीप्रकाश,वाग्ज्योती , डॉ.दर्शनसिंह निर्वैर, पृष्ठ-181
8. मनुस्मृति :अध्याय 8,मन्त्र 15
9. डॉ.वृन्कुमार तिवारी,वग्ज्योति-डॉ.दर्शन सिंह निर्वैर,पृष्ठ-63
10. नरेंद्र कोहली,महासमर,खंड-3,कर्म,पृष्ठ-313,314
11. नरेंद्र कोहली,महासमर,खंड–7,प्रत्यक्ष,पृष्ठ-290
12. नरेश मेहता,संशय की एक रात,पृष्ठ-72,74,75,76
13. गोस्वामी तुलसीदास,रामचरितमानस
14. /15./16. धर्म और अध्यात्म,आहा जिन्दगी पत्रिका,मार्च 2017 अंक,पृष्ठ-11
17. नरेंद्र कोहली,महासमर,खंड-3,कर्म,पृष्ठ-102,103
18. कबीरदास, बीजक
19. नरेंद्र कोहली,महासमर,खंड-4,धर्म,पृष्ठ-21
20. नरेंद्र कोहली,महासमर,खंड-6,प्रच्छन्न,पृष्ठ-223,224
21. नरेंद्र कोहली,महासमर,खंड-5,अंतराल,पृष्ठ-366,367,368

मंजू अरोरा
अनुसंधित्सु- कला एवं भाषा विभाग, लवली प्रोफेशनल यूनिवर्सिटी, फगवाड़ा, पंजाब. प्रधानाचार्य: सीनियर सेकेंडरी स्कूल, जालंधर.